International Online Multidisciplinary Journal
Review of Research
ISSN No : 2249-894X
Impact Factor : 3.1402 (UIF) [2015]
Save Tree, Save Paper, Save World

Review Of Research

'आदमकद' व्यक्तित्व

प्रा.डॉ. मीना जाधव
जवाहर महाविद्यालय, अणदूर.

स्त्री विमर्श की बात चलते ही कई प्रबुध्द भारतीय सस्कृति रक्षक मनिषियों की भृकुटी तन जाती है। वे भारतीय संस्कृति की उज्ज्वल परंपरा की दुहाई देने लगते है। अपने प्राचीन ग्रंथो से खोज–खोज कर ऐसे श्लोक, सूक्त और कथाओं को बतलाने लगते है जिसमें नारी को पूजनीय माना गया है। स्त्री के लिए अनेक उपाधियों के ढरे लगा देते है

कि नारी जगत जननी है, शक्ति है, शारदा है। कई–कई भावुकता भरे संदर्भो को देखने के बाद और देवी तुल्य आदर्श स्त्री चरित्रों के पारायण के बाद भी समझ तो सिर्फ इतना आता है कि आखिर हर युग में, हर रूप में स्त्री केवल शोषित रही है। हाशिए के भी पार रही है। मैने तो सिर्फ यह देखा महिमा मंडन के लाखों–करोडो प्रयासों के बाद भी हर देवी आखीर कवे ल औरत ही निकली और वो भी लाचार।

भारतीय स्वर्णिम युग से वर्तमान के संघर्ष युग तक औरत का सफर जब देखती हूँ तो निदा फाजली जी से माफी मांगते हुए उन्हीं की कुछ काव्यपंक्तीयों के साथ कहना पडता है–

पत्थर बदला पानी बदला बदला क्या?
औरत कल भी अबला थी आज भी अबला ही है।

न न, यह पढकर तुरंत कल्पना चावला, इंदिराजी, सुधा मूर्ति, बच्छेंद्री पाल, अरूंधती राय या ऐसे ही अन्य भारतीय यशस्वी महिलाओं के उदाहरण गिनाने की जरूरत नहीं है। ये सोचना भी बेमानी है कि विकसनशील देशों में विशेशतः भारत में महिलाओं ने कितनी प्रगति कर ली है। दरअसल चांद दूर से ही सलोना दिखता है, उसका धरातल तो खुरदूरा ही है। मगन रहना चाहों तो दरू ही से चांद को देखते रहो।

सच्चाई से सामना करना है तो सतह के बीहड दर्रो का सामना करना ही होगा। आजकल 'भूमंडलीकरण और स्त्री' विशय भी चर्चा के केन्द्र में है। भूमंडलीकरण के परिणामों के परिप्रेक्ष्य में स्त्री प्रश्नों को देखने का प्रयास दिखायी देता है। बाजारवाद में स्त्री की छवी कहीं बहुत ही प्रगतीशील तो कहीं बहुत बदतर नजर आती है। कही वह उपभोक्ता के रूप में छली जाती है तो कही भोग्या के रूप में। कही उसका श्रम नाकाबिले गौर है तो कहीं उसकी शक्ति क्षीण लगती है। एक ओर पितेसत्ताक शक्तियाँ उसे घर में ही बेघर करती है तो दूसरी आरे खुलेपन का ऐसा वहशियाना अंदाज उसे घेर लते ा है कि वह पुरूशों के बनाए सौंदर्यमानकों के अनुरूप अपनी देह कटवा–छंटवाकर एक मॉडल के रूप में खुद को ढालती रहती हैं।

लेखिकाएँ लिख रही है, निरन्तर लिख रही है। स्त्री की हर भूमिका पर, उसके हर प्रश्न पर तीखे तंज देकर सवालो भरी निगाहों से औरत की हर बात को कलम की नोक पर उठाएँ हुए लिख रही है। अपने सवाल, अपनी बात, अपना भावविश्व, अपना अर्थव्यवहार, अपनी आधुनिकता, अपनी चाहत, आशा–आकांक्षा, अपने तर्क अपनी कलम से लेखिकाएँ लिख रही है। लेकिन यहाँ भी उसे 'महिला लेखन' कह कर नजरअंदाज करने के प्रयास किये जा रहे है। उसे दोयम दर्जे का माना जा रहा है। स्त्री की बात कहती हुई यदि कोई मित्रो मरजानी टकरा ही गयी तो अश्लिलता का नारा बुलंद है ही। कुल मिलाकर इतना ही की स्त्री व्दारा लिखे साहित्य को नोटीस न करने की हजार वजह है।

स्त्री विमर्श की इस बेशुमार चर्चा में महानगरीय, नगरीय, कस्बाई और ग्रामिण महिलाएँ केन्द्र मे है। उनके शैक्षणिक, आर्थिक, जाति आदि के स्तर पर अलग–अलग प्रश्नों की चर्चा हैं। गांव जवार की औरत का दर्द कम ज्यादा रूप में सभी लेखिकाओं ने लिखा है। ग्रामिण महिला के जीवन को संजाते ी, उनकी समस्याओं को अभिव्यक्त करती, उनके सवालों के उपाय और विद्रोह को उकेरती हुई कई लेखिकाओं के कथा साहित्य में सूर्यबाला रचित 'आदमकद' की कामता मामी से जब मेरा सामना हुआ तो मैं अकबकाकर रह गयी। बेसरवाली मामी का जीवन उस स्थितप्रज्ञ योगी के समान लगता जो जैसा जीवन मिला है उसे बिना किसी शिकायत के स्वीकार कर चलता है।

दरअसल औरत का जीवन समझौतो का एक अनकहा लम्बा सिलसिला है। उसका हर पल हर क्षण किसी समझौते को स्वीकारने के लिए बाध्य होता है। समझौतों का यह सिलसिला ही उसे दर्द की गहरी खाई मे ढकेल दते ा है। बेसरवाली तो अपने औरत होने की शिनाख्त कराने से लेकर हर बात में ही समझौता करती चलती है। औरत होने की कोई पहचान उसके वजूद में नहीं है। न सुंदरता, न सुघडता, न रूप न रंग, न लोच न भंगिमा कद काठी भी सख्त और मजबूत जैसे आदमकद। उसमें औरत होने की पहचान अगर कुछ है तो वह है उसके हाथ की चूडियाँ और नाक में सोनेकी नक्काशीदार बेसर। 'अपनी बदसूरती, अपना शरीर, उसके लिए एक स्विकारा हुआ सच था। एक ऐसा सच जिसके लिए वह कतई जिम्मेदार न हो।'... 1 बस इसीलिए उसमें शर्मिंदगी या दयनियता का भाव नही है। वह अपने निट्ठलेपती से भी किसी स्नेह की अपेक्षा नही रखती क्योंकि किसी से रो–धोकर, आरजू मिन्नतें करके वह न तो प्यार पाना चाहती है ना ही दुतकार। 'वह जैसी है वैसी है।'... 2

पति कामता हद दर्जे का आलसी, बौदे किस्म का आदमी है। अनाथ होने की वजह से रिश्तेदारों की दया पर पलने की उसे एसे ी आदत लग गयी है कि वह मुफ्तखोर ही नहीं गमखोर भी हो गया है। ऐसा निट्ठलापन की बदसरू त मामी से ब्याह दिये जाने पर भी निश्चिंत भाव से स्वीकारता है कि–'दूनियादारी का तकाजा था सो हो गयी ब्याह सादी।'... 3 उनके लिए विवाह दायित्व नही है। उनकी सारी जिंदगी 'भाड से धोबियाने और धोबियाने से पानदरी की चौहद्दी के बीच गुजरती हुई बाकी बचे समय मे चौके से औसारे, औसारे से लकडियों वाली कोठरी में पडे रहना ... ठंडी की ठंडी, एकांत का एकातं ...'... 4 काम तो केवल मामी करती है। पुराने अचार की फाँखो से पीतल के हंडे परात चमकाती है। डंडे मे झाडु बाँधकर रसोई भंडारे की साफ–सफाई करती है। घर के बच्चों को गन्ने की गडेरियाँ बनाकर देती है। मसाले, चटनियाँ पीसती, उडद की बडियाँ, गेहुं का दलिया बनाती है। निंबु–अनार के थाले बाँधती, लौकी की बेले चढाती है और ऐसे ही अनगिनत काम करती रहती है। घर मे उसकी उपस्थिती का जताता था चाटा पोछा घर। घर के इतने काम करने पर भी अपने आश्रयदाताओं से वह उतरी या सादी धोती की अपेक्षा नहीं रखती। फटी धोती को मनोयोग से सिलसिल कर पहनती है। और जब धोती सिलने लायक भी नहीं रहती तो अपने गांव जाकर दो–चार बीघे जमीन से मिले उत्पन्न से कच्ची छींट की दो धोती, गावं के दर्जी से सिलाए पेटीकोट, पति के लिए पट्टेदार पजामा और कमीज लेकर आती है।

कामता के निट्ठलेपन पर दिया गया ताना भी वह झेल नही पाती। यह उसका तत्व है कि 'औरत के लिए इससे बडी जहालत कोई नहीं कि सारी उम्र वह अपने आदमी की काहिली और बोदेपन पर ली जाती लिहाडी बरदाश्त करती रहे।'... 5 वह जानती है कि उसका पति उसे अन्य कुछ भले न दे सके लेकिन सतं ान अवश्य दे सकता है। समय आने पर यह खुशी भी वह पा लेती है। लेकिन अपने सौर का इंतजाम भी वह खुद ही कर लेती है। बेसर बेच कर हल जुटाती है और गांव के खते और घर को संभाल लेती है। सौर मे जाने से पहले खेती लहलहा उठती है और घर के छाजन पर चढी बेले फल देने लगती है। लेकिन मामा का जीवन तो उसी पुराने ढर्रे पर चल रहा है। सौर के इंतजाम के लिए वह हल बेच देता है। खेत की रखवाली न होने से फसल चुरा ली जाती है और मामा सोचता है कि पत्नी अब सौर से निकल कर रहट से पानी निकाले, खेत संभाले। कामता को औरत की बात सुनकर गावं बस जाना मुसीबत लगता है। न झट से पानी का इंतजाम हो पाता है न सतु ी–जर्दे का। मामी घर खेत संभालती है तो वह बालक की ओर भी ध्यान नहीं दे पाता। गांजे की पिनक मे पडा रहता है और बच्चा कभी चुल्हे मे हाथ दे देता है तो कभी पानी की नांद मे जा गिरता है। लेकिन कामता के आलस मे कोई परिवर्तन नहीं आता।

अरहर के पैसो से मामी ने खाट खरीदनी चाही थी क्योकिं नदी किनारे के गावों में जहरीले कीडो का सामना हमेशा करना पडता है। अपने बच्चे को वह टूटे किवाड पर सुला देती है और पति के लिए खाट खरीदना चाहती है पर उसका संजोया पैसा मामा नशेपानी मे खर्च दते ा है। परिणामस्वरूप एक रात जहरीले बिच्छू के काटने से मामा की मौत हो जाती है। गांव से कस्बे तक तांगे पर लाद कर मामा का शव लाती है–दहन के लिए। लेखिका ने उस स्थिती को भी बडे सटीक शब्दों मे व्यक्त किया है–मामी आदिम–भित्ति–शिला–सी है। अब तक के जीवन में दुख ही दुख रहा है जिसे उसने जस का तस स्वीकारा है। यह स्थिती भी उसी निर्विकार भाव से स्वीकारती है। 'न रूदन न विलाप, न क्षोभ न विषाद। अजीब सनाका खायी–सी स्थिती।'... 6

लेकिन इस स्थिती मे अब उसे कवे ल अपने बच्चे की फिक्र है। कस्बे मे रहने वाली लाजवती (सूत्रधार) से पूछ लते ी है कि–'तुम रख सकोगी मेरे बच्चे को?' वह अपने बच्चे को पढाना चाहती है। वह भी मुफ्त नही उस पर खर्च होने वाला एक एक पैसा चुका देना चाहती है। पती के भरोसे वह कभी नहीं थी। उसकी आंखो मे भविष्य का सपना है जिसको पूरा करने के लिए वह श्रम करने को तैयार है। अरहर–मकई की खेती, अमरूद–अनार और कुम्हडे–लौकी के उत्पादन से वह खर्च चला लेगी इतना ही नही वह लाजवंती को आश्वस्त करती है कि–'गांव का घर खेत भी संभालूंगी और यहाँ तुम्हारा चुल्हा चौका, घर आंगन भी... पीछे के झांड–खंखाड साफ कर फल–फूल के पौधे रोप दूँगी ...'... 7

मामी की निस्पेहता मन को छू लेती है। उसका यह संघर्श उपेक्षित ही है। वह न तो अपनी बदसूरती के लिए जिम्मेदार है और न ही मामा के निट्ठलेपन के लिए। लेकिन इन दो वजहों से ही उसके श्रमका मूल्यांकन भी नहीं हो पाता। सभी के लिए वह उपेक्षित ही रही है। उसका खुद पर, और अपने श्रम पर विश्वास ही उसे भविश्य के लिए आस्थावान बनाए रखता है। अपने बालक के सुनहरे भविश्य को निर्मित करता उसका तटस्थ संघर्श स्त्री शक्ति और सामर्थ्य का सक्षम उदाहरण है। 'आदमकद' कहानी स्त्री की 'आदमकद' छवि को ही उभारता है। वह भी बडी सहजता के साथ न बहतु विद्रोही बडबोलापन है न ही रोना–धोना। केवल अपने श्रम के बलबुते झाड–झंखाड की जगह फल–फूल रोपती 'आदमकद' औरत की उदात्त छवि।

संदर्भः–

1) गैरहाजिरी के बावजूद (स्त्री केन्द्रीत कहानियाँ) सूर्यबाला
2) – वही –
3) – वही –
4) – वही –
5) – वही –
6) – वही –
7) –,,–